ISSN : 2320-0391

सृजन ಸೃಜನ

हिन्दी-कन्नड साहित्य और संस्कृति

ಹಿಂದಿ-ಕನ್ನಡ ತ್ರೈಮಾಸಿಕ ಪತ್ರಿಕೆ

अप्रैल-जून २०१७

त्रैमासिक पत्रिका

Scanned by CamScanner

RNI Regd. No. KARBIL/2014/54464

एक आदमी रोटी बेलता है
एक आदमी रोटी खाता है
एक तीसरा आदमी भी है
जो न रोटी बेलता है, न रोटी खाता है
वे सिर्फ रोटी से खेलता है
मैं पूछता हूँ–
यह तीसरा आदमी कौन है ?
मेरे देश का संसद मौन है।

– सुदामा पाण्डेय 'धूमिल'

ರೊಟ್ಟಿ ಮಾಡುವನೊಬ್ಬ
ರೊಟ್ಟಿ ತಿನ್ನುವನೊಬ್ಬ
ಮೂರನೆಯವನೂ ಇದ್ದಾನೆ
ಆತ ರೊಟ್ಟಿ ಮಾಡುವುದಿಲ್ಲ, ತಿನ್ನುವುದೂ ಇಲ್ಲ
ಕೇವಲ ರೊಟ್ಟಿಯಿಂದ ಆಟವಾಡುತ್ತಾನೆ
ನಾನು ಕೇಳುವೆ –
ಈ ಮೂರನೆಯವನು ಯಾರು?
ನನ್ನ ದೇಶದ ಸಂಸತ್ತು ಮೌನ.

– ಸುದಾಮಾ ಪಾಂಡೆಯ 'ಧೂಮಿಲ'

ISSN 2320-0391

सौम्य प्रकाशन
'कबीर कुंज' महाबलेश्वर कॉलनी,
दर्गा जेल के सामने,
विजयपुर – ५८६१०३ (कर्नाटक)

सौम्य प्रकाशन
'ಕಬೀರ ಕುಂಜ' ಮಹಾಬಳೇಶ್ವರ ಕಾಲೋನಿ,
ದರ್ಗಾ ಜೇಲ ಮುಂದೆ,
ವಿಜಯಪುರ – ೫೮೬೧೦೩ (ಕರ್ನಾಟಕ)

Scanned by CamScanner

कन्नड के राष्ट्रकवि

• डॉ. एस. टी. मेरवाडे

भारत देश अपनी विविधता के लिए प्रसिद्ध है । उसकी वैविध्यमय संस्कृति, परंपरा, आचार-विचार, खान-पान, वेष-भूषा, भाषा-बोली, साहित्य उसे संसार में सबसे अनूठा बना देता है । इसकी विविधता में ही एकता नजर आती है । भाषा तथा साहित्य के दृष्टि से भी भारत संसार के श्रेष्ठतम एवं प्राचीनता को अपनाया हुआ है । भारत के साहित्यकारों ने संसार को नई दिशा देने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है । भारत का साहित्य अपने - आप में गौरवान्वित है । भारत देश के साहित्यकारों का योगदान चिरस्मरणीय है ।

गोविंद पै :

मंगलूर के प्रसिध्द बाप्टे परिवार में गोविंद पै जी का जन्म सन् 1883 ई. मार्च 23 को हुआ । मंगलूर के धनी तिम्मय्या पै इनके पिता थे और माता जानकियम्मा । गोविंद पै की इण्टरमीडिएट शिक्षा मंगलूर के शासकीय कॉलेज में ही हुई । मद्रास में गोविंद पै बी. ए. की पढाई के लिए वहाँ के क्रिश्चियन कॉलेज में भर्ती हो गए । पढाई में सबसे आगे थे । ये निरंतर अध्ययनशील थे । इसी अवधि में इन्होंने अंग्रेजी, लैटिन, फ्रेंच, संस्कृत, पालि, बंगाली, हिंदी आदि पाश्चात्य और देशीय भाषाओं का अध्ययन किया । यहाँ उल्लेखनीय बात यह है कि गोविंद पै कुल मिलाकर 22 भाषाएँ जानते थे । महादार्शनिक, भारत के भूतपूर्व राष्ट्रपति डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन् बी.ए. में इनके सहपाठी थे ।

गोविंद पै जी को बचपन से ही समुद्र के साथ बडा लगाव था, जो उनके घर के नजदीक ही था । समुद्र का विस्तार और उसकी गहराई मानो गोविंद पै की जिंदगी के अभिन्न अंग बन गये थे । कन्नड के अनेक विद्वानों के मतानुसार पै का व्यक्तित्व सागर जैसा ही था ।

पूरे देश में अंग्रेजी के विरोध में जोरों से आन्दोलन चल रहा था । तिलक, गाँधीजी आदि के नेतृत्व में देशभर के युवा गोरों के विरोध लडने के लिए तैयार थे । एक ओर अहिंसात्मक रीति से असहयोग आंदोलन आदि चलते रहते तो दूसरी ओर क्रांति के गी भी गूँज रहे थे । अस्पृश्य निवारण, खादी का प्रचार, विदेशी वस्त्रों का बहिष्कार, सर्वधर्म समन्वय आदि कार्य निरंतर चल रहे थे । लोग स्वेच्छा से इन रचनात्मक कार्यों में भाग लेते थे । ऐसे समय में गोविंद पै जी का भी स्वतत्रता की विचारधारा से प्रभावित होकर उसमें कूद पडना स्वाभाविक ही था । गाँधीजी के प्रभाव में आकर गोविंद पै ने अपने जीवन में सादगी और सरलता को अपनाया । खादी वस्त्र धारण करने का उन्होंने निर्णय किया और अंत तक उस व्रत को निभाया । स्वत: कवि होने के कारण देशप्रेम, अस्पृश्यता निवारण, सद्भाव व समन्वय के विचारों से भरी अनेक कविताओं को उन्होंने लिख डाला । इन कविताओं के द्वारा लोगों में मातृभूमि के प्रति जागृति और प्रेम उत्पन्न होने में प्रेरणा दी ।

Scanned by CamScanner

इसी उद्देश्य से उन्होंने नौसरी की यात्रा भी की । देशपांडे नामक एक बडे देशप्रेमी जो बडौदा महाराज के यहाँ काम करते थे, उन्होंने अरविंद घोष की प्रेरणा से एक राष्ट्रीय विद्यालय की स्थापना की थी । इसके द्वारा स्वतंत्रता प्राप्ति की दिशा में क्रांतिकारी आंदोलन की गतिविधियाँ चलती थी । इस केंद्र के कार्यक्रम गोविंद पै जी के मन की इच्छा के अनुरूप ही थे ।

गोविंद पै जी जब बारह साल के थे तब से उनकी कलम से रचना प्रक्रिया की जो धारा बह निकली, वह उनके जीवन के अंत तक निरंतर बहती रही । उनकी पहली 'सुवासिनी' नामक कविता मंगलूर की 'सुवासिनी' नामक पत्रिका में प्रकाशित हुई । सन् 1911 में बरोंडा के नौसारी में रहते समय कवींद्र रवींद्रनाथ जी की कविता आई भुवन मन मोहिनी, गोविंद पै जी ने प्रास रहित अनुवाद प्रस्तुत किया । सन् 1920 में इनका सर्वप्रथम शोध लेख प्रकाशित हुआ । इसके बाद कुछ और शोध लेख प्रकाशित हुए । सन् 1928 ई. में 'भक्तवाणी' (वचन मालिका) मंगलूर से प्रकाशित हुई । उसी साल (1928) में 'गोम्मट जिनस्तुति' नामक कविता संग्रह प्रकाशित हुआ । इसके साथ इसी अवधि में फारसी के प्रसिध्द कवि 'उमर खय्याम' की रूबायतों का कन्नड रूपांतर प्रस्तुत किया । उमर खय्याम के रूबायतों का यह रूपांतर कन्नड में सबसे प्रथम और अत्यंत श्रेष्ठ माना गया है ।

सन् 1930 में गोविंद पै जी का पहला काव्य संग्रह 'गिळिविंडु'' (तोतों का झुंड) प्रकाशित हुआ ।

ईसा मसीह के अंतिम दिन की घटना को वस्तु बनाकर गोविंद पै जी ने गोलगोथा नामक खंडकाव्य को सन् 1931 में पूरा किया, जो 1938 ई. में प्रकाशित हुआ । इसी के साथ 'वैशाखी' नामक खंडकाव्य भी प्रकाशित हुआ, जो भगवान बुध्द के आखिरी दिनों से संबंधित है । 'प्रभास' और 'देहली' नामक और भी दो खंडकाव्य प्रकाशित हो गए ।

सन् 1942 ई. में 'चित्रभानु' नामक नाटक प्रकाशित हुआ, जिसकी वस्तु भारत छोडो (क्विट इंडिया) आंदोलन से संबंधित है । इनका बहुचर्चित नाटक 'हेब्बेरळु' (अंगुठा) सन् 1947 में प्रकाशित हुआ, जो दृश्यकाव्य शैली में है ।

जापानी साहित्य में नाटक परंपरा को विशिष्ट स्थान प्राप्त है । ऐसे एक विशिष्ट नाटक प्रकार का परिचय कन्नड साहित्य को पै द्वारा पहली बार कराया गया । इन्होंने नौं नाटकों में से श्रेष्ट 8 नाटकों को कन्नड में रूपांतरित किया, जिसका प्रकाशन 1949 ई. में हुआ । ''ताई'' (माँ) नामक और एक एकांकी नाटक सन् 1934 में प्रकाशित हुआ । बंगाली के नवीनचंद्र सेन के काव्यों पर आधारित 'श्रीकृष्ण चरित' का प्रकाशन 1962 ई. में हुआ । इसी साल इन्होंने 'वरूष हदिनालकाईतु बिडुगडेय नीडी' (वर्ष चौदह बीत गये, अब तो रिहा कीजिए) नामक कविता लिखी । माना जाता है कि यही इनकी आखिरी रचना है ।

गोविंद पै जी की बहुमुखी प्रतिभा को दृष्टि में रखकर सन् 1949 में मद्रास सरकार ने आप को 'राष्ट्रकवि' की उपाधि प्रदान की । इस प्रकार गोविंद पै जी राष्ट्रकवि जैसे परमोन्नत स्थान को प्राप्त करने वाले कन्नड के प्रथम कवि के रूप में शोभायमान हैं ।

कुवेंपु :

मनुजमत विश्वपथ, सर्वोदय, समन्वय तथा पूर्णदृष्टि इन पंचसिध्दांतों को माननेवाले कन्नड साहित्य के राष्ट्रकवि कुप्पळ्ळी वेंकटप्पा गौडा पुट्टप्प (कुवेंपु) का जन्म कर्नाटक राज्य के शिवमोगा जिला तीर्थहळ्ळी तालुक के कुप्पळ्ळी गांव में 29 दिसंबर 1904 को हुआ । पिता वेंकटप्पा, माता सीतम्मा । कुवेंपुजी की बाल क्रिडाओं की रंगस्थली कुप्पळ्ळी प्रकृति उपासना और सौंदर्योपासना का मूलस्थान मलेनाडु का रमणीय

Scanned by CamScanner

पर्वतीय प्रदेश रहा है । कुवेंपुजी ने मैसूर के महाराजा कॉलेज से बी.ए. तथा मैसूर विश्वविद्यालय से एम.ए. पास किया । उन्होंने शैक्षिक क्षेत्र में अपार सेवा समर्पित की है । मैसूर विश्वविद्यालय के प्राध्यापक, प्राचार्य व कुलपति के पद सफलता से संभाले हैं ।

राष्ट्रकवि कुवेंपुजी को राज्य तथा राष्ट्र के सर्वोच्य पुरस्कार प्राप्त हुए । कर्नाटक साहित्य अकादमी के पुरस्कारों से सम्मनित हुए श्रीरामायणदर्शनम् महाकाव्य सन् 1968 में ज्ञानपीठ पुरस्कार विजेता बने उपाधि सन् 1958 में राष्ट्रपति द्वारा पद्मभूषण उपाधि तथा सन् 1992 में कर्नाटक रत्न उपाधि से विभूषित हुए, कन्नड साहित्य सम्मेलन के अध्यक्ष्य बने और अनेक विश्वविद्यालय से डी.लिट उपाधि प्राप्त की ।

इस महामहिम साहित्यकार की जीवनयात्रा 10 नवंबर 1994 के दिन समाप्त हुई । यह प्रतिभान्वित व्यक्ति अपने अराध्य श्रीराम के चरणों अंतर्धान हुआ किंतु साहित्यकाश के दैदीप्यान नक्षत्र का अमित अलोक जनमानस को सदैव प्रभावित करते रहेगा ।

आधुनिक कन्नड के सर्वश्रेष्ठ कवि कुवेंपु जी ने अपनी विराट सृजनात्मक प्रतिभा से साहित्य को समृध्द बनाया है । उनकी सहस्त्राधिक कविताएँ हैं जिनकी वस्तु मुख्यता प्रकृति, आध्यात्म एवं समाज है । 'तानाजी' कथा-काव्य की कथा वस्तु ऐतिहासिक है । तानाजी राजा शिवाजी का बहादुर सेनापति है । प्रस्तुत कथा-काव्य में तानाजी का स्वाभिमान, राजभक्ति, चतुरता और अटूट राष्ट्रप्रेम को दर्शाया गया है । 'प्रताप सिंह' कथा-काव्य की वस्तु भी ऐतिहासिक है । मातृभूमि चित्तौड की रक्षा के लिए मुगल बादशाह अकबर की अपरिमित सेना के विरूध्द, सिमित राजपूत सेना के साथ प्राणों की बाजी लगाकर लडनेवाले राणा प्रतापसिंह और उसके पिता उदयसिंह की वीरता, पराक्रम, देशभक्ति, शौर्य और साहस को प्रतिबिंबित कवि ने किया है । 'जयसिंह का अंतिम समय' ऐतिहासिक कथा-काव्य है तो 'रक्त रजनी' पौराणिक पृष्टभूमि में लिखा गया है । 'कुमुदिनी' वड्र्सवर्थ कवि की लाओडामिया कविता के भाव का अनुकरण करते हुए लिखा गया कथा काव्य है ।

जीवन, समाज और देश के विविध परिवेश को लेकर कवि कुवेंपुजी ने अपने साहित्य में मर्मस्पर्शी चित्रण का उद्देश्य केवल मत, धर्म तथा जाति का क्रूर चित्रण मात्र न रहकर, उस समय की महत्वपूर्ण माँग, जो देश की स्वतंत्रता की थी उसके पूरक रूप में भी इन्होंने स्वातंत्र्य तथा राष्ट्रीय आंदोलनों के गीत लिखे हैं । इस दिशा में 'पांचजन्य' काव्य संग्रह उल्लेखनीय है । इस संग्रह के गीत क्रांतिकारियों में प्रेरणा जगाने में सशक्त हुए हैं । उस समय क्रांतिकारी इस गी तो अपना मंत्र मानते थे ।

''नडे मुँदे नडे मुँदे,
नुग्गि नडे मुँदे,
जग्गदेय कुग्गयेय
हिग्गि नडे मुँदे,'' ।
(आगे बढो, आगे बढो जोर लगाके आगे बढों,
पीछे मत हटो हिम्मत न हारो उत्साह से आगे बढो)

'श्रीरामायणदर्शनम्' महाकाव्य विश्व साहित्य के लिए कुवेंपुजी की विशिष्ट देन है । कन्नड साहित्य के क्षेत्र में ही नहीं, भारतीय साहित्योतिहास के संदर्भ में भी इस महाकाव्य का अविर्भाव एक महत्वपूर्ण घटना है । यह महाकाव्य जो भाषिक साधानाओं की एक बडी चोटी का प्रतिनिधित्व करता है । जैसा की कुवेंपुजी ने खुद कहा है - सर्वोदय, समन्वय तथा पूर्णदृष्टि का प्रतीक भी बना है । वास्तव में ये तीनों शब्दपुंज ऐसी चाबियाँ है जो इस महाकाव्य के दर्शन लोक को खोल देती है । अयोध्या कांड, किष्किन्धा कांड, लंका तथा श्री कांड नाम के चार कांडों में 22,290 पंक्तियों में अर्विभूत इस महाकाव्य में जो दर्शन साकार हुआ है, वह अपने में

Scanned by CamScanner

भूत, वर्तमान, एवं भविष्य कालोंको समा चुका है । इस युग के व्यक्त एवं अव्यक्त अभीप्साओं का प्रतीक बना है । जैसा कि कुवेंपुजी ने खुद कहा है – जो लोग इसमें काव्य चाहते हैं, उनको यहाँ 'काव्य' मिलता है, जो लोग इसमें 'कहानी' चाहते हैं, उनको यहाँ 'कहानी' मिलती है, जो लोग इसमें दर्शन पाना चाहते हैं उनकों यहाँ दर्शन मिलता है'' इस प्रकार 'श्रीरामायणदर्शनम्' में कथा, काव्य एवं दर्शन का संगम हुआ है । इस महान कृति को सन् 1967 में ज्ञानपीठ पुरस्कार प्राप्त हुआ, जो कन्नड साहित्य के लिए प्रथम भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार है ।

कुवेंपु के दो उपन्यास हैं – पहला 'कानूरु सुब्बम्मा हेग्गडति' सन् 1937 में रचा गया था । तब कुवेंपु जी 34 साल के युवक थे, वे समाज, धर्म, तथा राजनीति के बारें में अच्छी तरह जान चुके थे । दूसरा उपन्यास 'मलेगळळल्ली मदुमगळू' सन् 1938 में रचा गया था । प्रस्तुत दोनों उपन्यासों में सत्य-असत्य, धर्म-अधर्म, अंधविश्वास, शोषण आदि विचारों के साथ मलेनाडु के जनजीवन का सहज चित्रण है । कुवेंपुजी के नाटक उनकी प्रखर वैचारिकता एवं स्पष्ट सामाजिक जागरूकता के सजीव चित्र हैं । उनके चौदह नाटक हैं ।

कुवेंपुजी का रचना संसार समृध्द है । साहित्य की ऐसी कोई विधा नहीं है, जिसमें उन्होंने नहीं लिखा हो । काव्य, उपन्यास, कहानी, नाटक, निबंध, काव्यशास्त्र, आलोचना, बालसाहित्य, जीवनी, आत्मकथा आदि विधाओं में उन्होंने जो कुछ लिखा है, वह उस विधा की महत्वपूर्ण उपलब्धि है ।

जी. एस. शिवरुद्रप्पा :

डॉ. जी. एस. शिवरुद्रप्पा का जन्म 7 फरवरी 1923 में कर्नाटक के शिवमोग्गा जिले के शिकारीपुर में हुआ । माता – वीरम्मा, पिता – गुग्गरी शांतवीर । प्रारंभिक शिक्षा होन्नळ्ळी तथा चन्नगिरि में हुई । उन्होंने सन् 1949 में बी.ए. सन् 1953 एम.ए. प्रथम श्रेणी, स्वर्णपदक के साथ उत्तीर्ण किया । सन् 1960 में कुवेंपु जी के मार्गदर्शन में मैसूर विश्वविद्यालय से पीएच.डी. की उपाधि प्राप्त की ।

उन्होंने सन् 1949-1963 के बीच मैसूर विश्वविद्यालय में कन्नड प्राध्यापक के रूप में सेवा की । सन् 1961-1966 के बीच उस्मानिया विश्वविद्यालय, हैदराबाद के कन्नड विभाग के रीडर तथा अध्यक्ष के रूप में कार्यरत रहे । सन् 1966-1980 के बीच बेंगलूर के कन्नड विभाग में रीडर के रूप में सेवा की । सन् 1980-1987 के बीच बेंगलूर विश्वविद्यालय के कन्नड विभाग में प्राध्यापक तथा निर्देशक के रूप में कार्य किया सन् 197-1990 के बीच कन्नड साहित्य अकादमी के अध्यक्ष रहे ।

रचनाएँ – काव्यसंग्रह : सामगान, चलवु-वलव, देवशिल्प, तीर्थवाणी, कार्थिक, दीपद हेज्जे, अनावरण, तेरदे दारी, गोडे, काडिन कत्तलल्ली, प्रिती इल्लद मेले, चक्रगति और व्यक्त मध्य आदि । गद्यसाहित्य : कर्मयोगी, मास्को दल्ली 22 दिन, गंगेय शिखरगळल्ली, विमर्शय पूर्व पश्चिम, परिशिलन, गतिबिम्बु, प्रतिक्रिये, नवोदय, कन्नड साहित्य समीक्षे, अनुणन, सौंदर्य समीक्षे, महाकाव्य स्वरूप, काव्यर्थ चिंतन, कन्नड कविगळ काव्यकल्पने, चतुरंग, बेडगु, अमेरिकादल्ली कन्नडिग, होस कन्नड कवितेगळल्ली काव्य चिंतन, विस्तरण शिवयोगी सिद्धराम, सर्वभूषण शिवयोगी चदुरिद चिंतगळु आदि प्रमुख हैं ।

पुरस्कार :

1. 'मास्कोदल्ली 22 दिन' कृति के लिए सोवियत लैंड नेहरू पुरस्कार (1984)
2. कन्नड-साहित्य अकादमी पुरस्कार (1972)

Scanned by CamScanner

3. 'काव्यार्थ चिंतन' के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार (1964)
4. कर्नाटक सरकार द्वारा राज्योत्सव पुरस्कार (1964)
5. प्रो. भूसनूरमठ पुरस्कार (1997)
6. गोरूरू पुरस्कार (1999)
7. डॉ. मास्ती पुरस्कार (2000)

डॉ. जी. एस. शिवरुद्रप्पा बहुमुखी प्रतिभा के धनी हैं। उन्होंने गद्य तथा पद्य दोनों विधाओं में अपनी लेखनी चलाई है । शिवरुद्रप्पा कवि के रूप में ख्यात रहे । शिवरुद्रप्पा को प्रकृति का कवि कहा जाता है । प्रकृति को उन्होंने अपने पूर्ववर्ती कवियों से भी भिन्न दृष्टि से देखा है । शिवरुद्रप्पा के प्रेम की कल्पना वैश्विक है । उनके काव्य में 'वसुदैव कुटुंबकम्' की भावना दिखाई देती है । मनुष्य-मनुष्य के बीच की दीवार को समाप्त कर मानवतावादी प्रेम का संदेश देना चाहते हैं ।

भारत के आजादी के इतने वर्षोपरांत भी अत्याचार, गरीबी के बीच संवेदनशील मन किस तरह दुखी है और मन का आक्रोश उनके काव्य के माध्यम से प्रस्फुटित हुआ है । युगों से इस पुरुष प्रधान समाज ने नारी को कई सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, आर्थिक तथा सांसकृतिक बंधनों में बाँधकर रखा है । पुरुष ने नारी को अपने वश में रखने का हरसंभव प्रयास किया है । नारी को शूद्र के समान यातना दी गई । जी. एस. शिवरुद्रप्पा के काव्य में नारी संबंधी दृष्टिकोन सबसे भिन्न है । उन्होंने नारी को पुरुष के समान माना है । तथा नारी को शक्ति प्रदान करनेवाली मानते हुए उसे श्रेष्ठ स्थान दिया है । उनकी पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं -

"निन्न शक्तिय बलदिंदले व्यक्तित आदेनु नानु इ लोकदल्ली ।
("तुम्हारे शक्ति के बल से ही मैं व्यक्तित बना इस संसार में ।")

■■

हिंदी विभाग, एस.बी.कला एवं के.सी.पी. विज्ञान महाविद्यालय - विजयपुर (कर्नाटक)
मो. 9448185705

Scanned by CamScanner